'उपेक्षित विमुक्त -घुमंतू समुदाय की दास्तान हिंदी साहित्य के परिप्रेक्ष्य में'

डॉ.सूर्यकांत शिंदे
हिंदी विभागाध्यक्ष
लोकमान्य महाविद्यालय,सोनखेड,नांदेड
ईमेल-suryakantshinde03@gmail.com
Mob-8208691286

सारांश

यह समाज भी अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहा है। बहिस्कृत विमुक्त घुमंतू समाज आज भी आजादी के अमृत से वंचित है। स्वतंत्रता के इतने वर्षों बाद भी इन जनजातियों के उत्थान हेतु प्रयास उतनी मात्रा में नहीं हुये जितनी मात्रा में होने चाहिए थे। इन घुमंतू जनजातियों की अपनी एक अलग संस्कृति है,अपने रिवाज है,अपनी परंपरायें है।उसका जतन करते हुये उन्हे विकास की मुख्य धारा में लाने का प्रामाणिक प्रयत्न होना चाहिए। हिंदी कथा साहित्य में विशेषकर आधुनिक रचनाकारों ने इन समाज के कुछ अनछूये पहलुओं पर सुक्ष्मता से रोशनी डालने का प्रयत्न किया है।

बीज शब्द- विमुक्त, घुमंतू, समुदाय, साहित्य।

प्रस्तावना:-

आज हम देश के आजादी का अमृत महोत्सव बडी धुम-धाम के साथ मना रहे हैं।लेकिन आजादी के 75 वर्ष पूरे हो जाने के बाद भी हमारे देश की कई ऐसी जनजातियाँ हैं। जो आज भी विकास से कोसो दूर है। जिसमें प्रमुख है समाज से बहिस्कृत माने जानेवाला विमुक्त घुमंतू,अर्ध घुमंतू समाज जो आजादी के विकास रूपी अमृत से आज भी वंचित है। विशेष रूप से भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में इन जनजातियों का विशेष योगदान रहा है।उनके संघर्ष और बलिदान के बिना स्वतंत्रता की संकल्पना पूरी नहीं हो सकती।लेकिन आजादी के बाद उनके संघर्ष और बलिदान को पूरी तरह से भूला दिया गया। योध्दा और लडाकू प्रवृत्ति के कारण अंग्रेजों ने उन्हे अपराधी घोषित किया लेकिन आजादी मिलने के बाद भी उनकी तरफ देखने की दृष्टि नहीं बदली यही इस जनजातियों की सबसे बडी विडंबना है। इसका प्रमुख कारण है उनका संघटित न होना।

" घुमंतू शब्द का शाब्दिक अर्थ है। 'घुमक्कड' जिनका कोई स्थायी निवास नहीं होता और अजिविका की तलाश में वे एक स्थान से दूसरे स्थान पर घुमा करते हैं और घूमना उनका शौक नहीं बल्कि विवशता है।आज भी शिक्षा के अभाव में ये जातियाँ जानवरों से भी बदतर जीवन व्यतीत करने को विवश है। एक पक्षी भी घोंसला बनाकर रहता है,गली का जानवर भी एक स्थान खोज लेता है और जीवन भर वहाँ रह लेता है,लेकिन विमुक्त घुमंतू जनजातियों की यह विडंबना है की घर की चाह रखकर भी वे घर से वंचित है। मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ती के अभाव के साथ-साथ अपराधिक कलंक इन्हे ढोना पडता है"।एक तरफ मराठी,हिंदी,अंग्रेजी या अन्य भाषाओं में आत्मकथा,उपन्यास,कहानी आदि विविध विधाओं में विपूल मात्रा में लेखन हो रहा है।लेकिन विमुक्त घुमंतू समुदाय पर किसी भी भाषा के साहित्य में सृजन बहुत कम मात्रा में नजर आता है। वैसे देखा जाए तो अंग्रेजी साहित्य ने सबसे पहले विमुक्त जनजातियों की संवेदना को स्वर प्रदान किया है। मराठी साहित्य पर नजर डाली जाए तो सन 1980 में लिखित लक्ष्मण माने जी की आत्मकथा 'पराया' से घुमंतू समाज के जीवन पर प्रकाश डाला गया है। इस आत्मकथा में घोरदरिद्रता,अछूतेपन और अज्ञानता के अंधकार में डूबा हुआ कैकाडी समाज का यथार्थ हमारे सामने आता है।इसके साथ साथ लक्ष्मण गायकवाड द्वारा लिखित 'उचल्या'(उठाईगीर) आत्मकथा में 'पारधी' जो अपनी उपजीविका के लिए छेटे –मोटे चोरी के अपराध करता है।।अंग्रेज सरकार ने तो उन्हे गुनहगार का ठप्पा लगा दिया था और आज भी उस समाज की ओर उसी रूप में देखा जाता है, यही सबसे बडी विडंबना है। एक अर्थ में देखा जाए तो विमुक्त जनजातियों की पहली पीढी जब शिक्षित हुयी तब उन्होने अपने समाज की दशा और दिशा को अत्यंत सजीवता के साथ शब्दबद्ध किया है।

हिंदी कथा साहित्य में जनजातीय विमर्श-

आधुनिक हिंदी साहित्य के अनेक रचनाकारों ने समाज में उपेक्षित जनजातियों की संवेदना को लेकर लिखा है। जिनमें डॉ.रांगेय राघव एक महत्वपूर्ण रचनाकार है।डॉ.रांगेय राघव स्वातंत्र्योतर काल के एक बहुमुखी प्रतिभा संपन्न समाजवादी उपन्यासकार है। जिन्होने ऐतिहासिक ,आंचलिक,जीवन चरित्रात्मक एवं सामाजिक उपन्यासों का विपुल भंडार अल्पकाल में सृजन किया है। "रांगेय राघव का उपन्यास 'कब तक पुकारूँ' 'कमीन' नामक खानाबदोश समाज को आधार बनाकर रचा गया है,जिनके नाम के आधार पर 'कमीना'नामक गाली का ईजाद हुआ है,जिसका प्रयोग खुल्लम-खुल्ला 'नीचता'घटियापन आदि के अर्थ में किया जाता है।इस निरक्षर सामाजिक समूहों ने यह धारना भी बना ली हो कि इन्हे धार्मिक एवं परंपरागत रूप से अपराध भी करना है। वस्तुतः यह हमारे आधुनिक समाज की विडंबना ही है,जो इन समुदायों को वस्तुस्थिति से अवगत न करा सका, उन्हे उनकी पारंपरिक अँधेरी दुनिया से बाहर न ला सका, वहाँ तक शिक्षा की पर्याप्त रोशनी न ले जा सका"। आज समय के साथ-साथ बढती गरीबी की मार ने इनके स्वाभिमान को कुचलकर अनेक समुदायों को भीख माँगकर गुजारा करने को बाध्य किया है,हमारे तथाकथित सभ्य समाज के अपमानजनक रवैए एवं दुत्कारपूर्ण व्यवहारोंने इस समाज के स्वाभिमान को गहरी चोट पहुंचायी है। प्रस्तुत उपन्यास राजस्थान के बैर ग्राम तथा उसके निकटवर्ती प्रदेश में रहने वाले नटों की उपजाति करनट के जीवन व्यापार की कथा है,इसमें जमींदारों द्वारा शोषित जाति की विवशताओं का विस्तृत वर्णन मिलता है।

इसी प्रकार डॉ.रांगेय राघव द्वारा लिखित दुसरा उपन्यास '**धरती मेरा घर**'में गडिये लुहारों के जीवन के कुछ अनछूए और अनदेखे पहलुओं पर प्रकाश डाल गया है।अपने ही सिध्दातों,आदर्शों और जीवन मूल्यों पर जीनेवाले ,कभी घर बनाकर न रहनेवाले,खानाबदोशों की तरह जीवन यापन करनेवाले इस समाज का सजीव वर्णन इस उपन्यास में है।

इसी प्रकार उदयशंकर भट्ट द्वारा लिखित '**सागर लहरें और मनुष्य**'उपन्यास में महानगरी मुंबई के पश्चिम तट पर स्थित बर्सोवा गाँव के मछुआरों और माहिम के कोलियों का जीवन चित्रित हुआ है।इन दोनों जनजातियों का रहन-सहन,स्वभाव,रीति-रिवाज,त्यौहार जैसे नारियल-पूर्णिमा,यौन सम्बध,आर्थिक स्थिति-गरीबी,सिनेमा का प्रभाव आदि को सजीवता के साथ चित्रित किया गया है।उनके गीत और नृत्य उनके सांस्कृतिक जीवन की झाँकी प्रस्तुत करते है।,तो शराब,गांजा आदि मादक द्रव्यों का प्रयोग ,उनके सेवन के बाद लडाई-झगडे,मार-पीट,गाली-गलौज उनकी हीन दशा का संकेत करते है।

इसी के साथ ही वृंदावनलाल वर्मा द्वारा लिखित '**कचनार**' उपन्यास की पृष्ठभूमि ऐतिहासिक है। उपन्यास का घटना काल 1792 से 1803 के मध्य का है।प्रस्तुत उपन्यास में गौड जनजाति को केंद्र में रखकर उनकी विडंबना को दर्शाया गया है। वैसे प्रेमचंदोत्तर काल के उपन्यासकारों में वृंदावनलाल वर्मा सर्वाधिक ख्याति प्राप्त उपन्यासकार है।

अन्य उपन्यासकारों में मैत्रेयी पुष्पा का उपन्यास **'अल्मा कबूतरी'** में बुंदेलखंड क्षेत्र की जनजाति महिलाओं की दास्तानों को उजागर किया गया है। प्रस्तुत उपन्यास में कबूतरा जाति की आपराधिक प्रवृति के कारण महिलाओं को होनेवाली परेशानियों का यथार्थ चित्रण मिलता है।आजादी के पश्चात भी कुछ जनजातियों की स्थिति में सुधार नहीं आया और आज भी उनकी हालत दयनीय है। इस उपन्यास का प्रमुख पात्र रायसिंह कहता है-'आजादी के बाद का सडा हुआ दुर्गंध मारता इतिहास.....कॉपी के पन्ने चिंदी-चिंदी कर डाले।झूठा मूँह-झूठी इबारत। बोलने के लिए बोले गए चमत्कारी जुमलो,ढोंग,गंदा खेल"।

सदियों से अपनी अस्तित्व की रक्षा के लिए संघर्षरत बुंदेलखंड की कबूतरा जनजाति कथावस्तु की आधारभूमि है।इसके माध्यम से कबूतरा जनजाति के जीवन संघर्ष की वास्तविकता को दर्शाने का प्रयास किया गया है।कबूतरा जनजाति के लोग सभ्य समाज का हिस्सा बनना चाहते है।परंतु सभ्य समाज इन्हे जंगलों में छिपने के लिए मजबूर करता है। जनजाति की स्त्रियाँ या तो शराब की भट्टियों पर या किसी के बिस्तरों पर मिलती है। उपन्यास में आल्मा नामक युवती के माध्यम से आदिवासी समाज की स्त्रियों की दयनीय व्यथा को मैत्रेयी पुष्पा ने रेखांकित किया है।

आधुनिक हिंदी साहित्य के एक महत्वपूर्ण रचनाकार के रूप में भगवीनदास मोरवाल को पहचाना जाता है। '**रेत**'उनका चर्चित उपन्यास है।प्रस्तुत उपन्यास में मोरवाल जी ने 'कंजर' समाज के अंतर्बाह्य पक्षों को उजागर करने के साथ-साथ उनके शोषण एवं

संघर्ष की अभिव्यक्ति की है।इस उपन्यास की कथा के केंद्र में है-हरियाणा राज्य का एक गाँव-'गाजूकी'गाजूकी गाँव के 'कमला सदन'के माध्यम से लेखक ने कंजर जनजाति का रहन-सहन और संघर्षपूर्ण जीवन –यापन उपन्यास में प्रस्तुत किया है। कंजर याने काननचर अर्थात जंगल में घूमनेवाला।कंजर एक ऐसी जनजाति है,जो ब्रिटिश शासनकाल में 'अपराधी जनजाति'करार दी गई थी। इस उपेक्षित जनजाति के लोग वेश्यावृति अपनाकर तथा शराब बनाने का व्यवसाय कर अपना जीवन निर्वाह करते है।इस जनजाति की अधिकांश स्त्रियाँ वेश्यावृति अपनाकर अपना जीवन निर्वाह करती है। वेश्यावृति का यह व्यवसाय कोई चाहकर भी छोड नहीं सकती ,क्योंकि तथाकथित इज्जतदार समाज इन्हे अपनाने के लिए तैयार नहीं होता । कंजर जनजातियों की स्त्रियों का शोषण इज्जतदारों द्वारा ही नहीं बल्कि प्रशासन व्यवस्था के द्वारा भी किया जाता है। प्रस्तुत उपन्यास में भारतीय समाज के एक ऐसे उपेक्षित वर्ग की नितांत यथार्थपरक दास्तान प्रस्तुत करता है। तथाकथित व्यवस्था ने सदियों से समाज को गहरे अंधकार के गर्त में डाल दिया है और दैहिक शोषण को उनकी नियति बना दिया है।उपन्यास में आर्थिक,राजनीतिक,सामाजिक व धार्मिक सभी दृष्टि से कंजर जनजाति को केंद्र में रखकर गहन चिंतन प्रस्तुत किया है।

हिंदी साहित्य में और एक चर्चित उपन्यासकार है मणि मधुकर,जिन्होने 1981 में **'पिंजरे में पन्ना'** उपन्यास लिखकर उपेक्षित जनजाति की दास्तान को हमारे सम्मुख रखा है। प्रस्तुत उपन्यास के केंद्र में रेगिस्तान का गाडिया लुहार जनजाति है।इस उपन्यास में गाडिया लुहार समाज का विस्थापित जीवन यथार्थ की अनुभूति कराता है। 'सुरध्याणी ख्याल' मंडली की कलाकार पन्ना का जटिल जीवन और प्रेम की एक बारीक-सी लहर कथानक को जीवंत बनाती है। पन्ना स्त्री अस्तित्व के लिए एक तरफ अपने प्रेम को त्यागती है,तो दूसरी तरफ सामंती अहंकार से टक्कर लेती है। आखिर सामंती साजिशों के बीच उसका जीवन दम तोड देता है।लेकिन उपन्यास की दूसरी स्त्री पात्र रम्या उन्ही चुनौतियों का सामना करने को तैयार है। उपन्यास का यह कथन बहुत कुछ कह जाता है-"पन्ना तो बार-बार जन्म लेती है-----।" 'लेकिन हर बार उसके लिए एक पिंजरा तैयार होता है। मैं उस पिंजरे को तोडूँगी'। इस प्रकार गाडिया लुहार जनजाति की यथार्थ और सजीव अभिव्यक्ति इस उपन्यास में देखने को मिलती है।

इसके साथ ही साथ हिंदी की चर्चित लेखिका शरद सिंह द्वारा लिखित **'पिछले पन्ने की औरतें'** उपन्यास भी उपेक्षित जनजातियों की समस्याओं को मुखर स्वर प्रदान करता है। यह उपन्यास मध्य-प्रदेश के बुंदेलखंड इलाके के बेडिया समुदाय की स्त्रियों के जीवन पर आधारित है।लेखिका ने बेडिया समुदाय के इतिहास,संस्मरणों,लोककलाओं एवं किवदंतियों के माध्यम से बेडनियों के जीवन के नंगे यथार्थ को उपन्यास में चित्रित किया है। भारत की अन्य खानाबदोश जनजातियों की तरह बेडिया जनजाति भी घुमंतू जाति है। वर्तमान समय में बेडिया समुदाय मध्य-प्रदेश के सागर जिले और उसके आसपास विशेषकर 'पथरिया बेडनी'नामक गाँव में बसा हुआ है।इस समाज की स्त्रियाँ 'राई'नृत्य करती है।बुंदेलखंड के इलाके में यह नाच काफी प्रसिद्ध है और इसके लिए बेडनियों को विशेष तौर पर बुलाया जाता है।द्वार पर बेडनी का नाच यहाँ सामजिक प्रतिष्ठा का प्रतिक माना जाता है। लेकिन दूसरी तरफ राई नृत्य के बहाने बेडनियाँ देह व्यापार में संलग्न है। एक अर्थ में वह देह व्यापार जैसे अवैध्य कृत्य करने के लिए मजबूर है।

" देह व्यापार की लगातार आवश्यकता ने बेडियाँ औरतों के जीवन में कभी स्थायित्व नहीं आने दिया। समाज में इन औरतों की उपस्थिति का अनुभव तो किया जाता है।,किंतु इनके प्रति संवेदना दिखाई नहीं जाती। अधिकांश लोगों के लिए ये औरतें बेडनी मात्र है,जिन्हे नचाया और भोगा जा सकता है।,जिन्हे परंपरा की जंजिरों में जकड कर बंधुआ बनाए रखा जा सकता है। लेकिन उन्हे विकास की मुख्य धारा में जोडने का प्रयास नहीं होता।

स्त्री विमर्श पर आधारित इस उपन्यास में सदियों से पीडित,शोषित और उपेक्षित स्त्रियों की जीवन दशाओं को यथार्थ अनुभूति के साथ रेखाकित किया गया है।'

निष्कर्ष: उपरोक्त विवेचन के आधारपर कहा जा सकता है कि,नारी विमर्श,दलित विमर्श,आदिवासी विमर्श की तरह ही विमुक्त घुमंतू जनसमुदाय की भी अपनी समस्याएँ है,अपनी संवेदनाएँ है। यह समाज भी अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष कर रहा है।

बहिस्कृत विमुक्त घुमंतू समाज आज भी आजादी के अमृत से वंचित है। स्वतंत्रता के इतने वर्षों बाद भी इन जनजातियों के उत्थान हेतु प्रयास उतनी मात्रा में नहीं हुये जितनी मात्रा में होने चाहिए थे। इन घुमंतू जनजातियों की अपनी एक अलग संस्कृति है,अपने रिवाज है,अपनी परंपरायें है।उसका जतन करते हुये उन्हे विकास की मुख्य धारा में लाने का प्रामाणिक प्रयत्न होना चाहिए। हिंदी कथा साहित्य में विशेषकर आधुनिक रचनाकारों ने इन समाज के कुछ अनछूये पहलुओं पर सुक्ष्मता से रोशनी डालने का प्रयत्न किया है। यदि इन्हे स्थायी निवास,शिक्षा,रोजगार,सम्मान दिया जाए, उनके उपर का अपराधिक कलंक मिट जायेगा और वे भी सभ्य समाज की मुख्य धारा में आ जाएंगे, आवश्यकता है उनकी तरफ मानवीय दृष्टिकोन से देखने की.....।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1)डॉ.सूर्यनारायण रणसुभे-उठाईगीर।
2)संगीता कोठियाल-बाते कही-अनकही(14दिसंबर,2020)
3)डॉ.प.ज.हरिदास-हिंदी-मराठी उपन्यास कोष(1860-1960)
4)मैत्रेयी पुष्पा-आल्मा कबूतरी पृ.सं.104
5)भगवानदास मोरवाल-रेत।
6)डॉ.रामानंद कुलदीप-रेत-उपेक्षित वर्ग की यथार्थपरक दास्तान।
7)मणि मधुकर-पिंजरे में पन्ना पृ.सं.147
8)डॉ.कृष्णा जाखड-मणि मधुकरःभाषाई अस्तित्व का लेखक।
9)स्तुति राय-समीक्षा-पिछले पन्ने की औरतें।